International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.379 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 9, Issue 4, July 2022 |

भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में किसानों का योगदान

Ransingh Yadav

Assistant Professor, History, BSR Govt. Arts College, Alwar, Rajasthan, India

सार

1857 ई. के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम को अंग्रेज़ों ने कुछ देशी रियासतों की सहायता से दबा तो दिया, लेकिन इसके पश्चात् भी भारत में कई जगहों पर संग्राम की ज्वाला लोगों के दिलों में दहकती रही। इसी बीच अनेकों स्थानों पर एक के बाद एक कई किसान आन्दोलन हुए। इनमें से अधिकांश आन्दोलन अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ किये गए थे। कितने ही समाचार पत्रों ने किसानों के शोषण, उनके साथ होने वाले सरकारी अधिकारियों के पक्षपातपूर्ण व्यवहार और किसानों के संघर्ष को अपने पत्रों में प्रमुखता से प्रकाशित किया था। नील विद्रोह, पाबना विद्रोह, तेभागा आन्दोलन, चम्पारन सत्याग्रह, बारदोली सत्याग्रह और मोपला विद्रोह प्रमुख किसान आन्दोलन के रूप में जाने जाते हैं। जहाँ 1918 ई. का खेड़ा सत्याग्रह गाँधीजी द्वारा शुरू किया गया, वहीं 'मेहता बन्धुओं' (कल्याण जी तथा कुँवर जी) ने भी 1922 ई. में बारदोली सत्याग्रह को प्रारम्भ किया था। बाद में इस सत्याग्रह का नेतृत्व सरदार वल्लभ भाई पटेल जी के हाथों में रहा।

परिचय

यह आन्दोलन भारतीयों किसानों द्वारा ब्रिटिश नील उत्पादकों के ख़िलाफ़ बंगाल में किया गया। अपनी आर्थिक माँगों के सन्दर्भ में किसानों द्वारा किया जाने वाला यह आन्दोलन उस समय का एक विशाल आन्दोलन था। अंग्रेज़ अधिकारी बंगाल तथा बिहार के ज़मींदारों से भूमि लेकर बिना पैसा दिये ही किसानों को नील की खेती में काम करने के लिए विवश करते थे, तथा नील उत्पादक किसानों को एक मामूली सी रक़म अग्रिम देकर उनसे करारनामा लिखा लेते थे, जो बाज़ार भाव से बहुत कम दाम पर हुआ करता था। इस प्रथा को 'ददनी प्रथा' कहा जाता था।[1,2]

पाबना विद्रोह (1873-1876 ई.)

पाबना ज़िले के काश्तकारों को 1859 ई. में एक एक्ट द्वारा बेदख़ली एवं लगान में वृद्धि के विरुद्ध एक सीमा तक संरक्षण प्राप्त हुआ था, इसके बाबजूद भी ज़मींदारों ने उनसे सीमा से अधिक लगान वसूला एवं उनको उनकी ज़मीन के अधिकार से वंचित किया। ज़मींदार को ज़्यादती का मुकाबला करने के लिए 1873 ई. में पाबना के युसुफ़ सराय के किसानों ने मिलकर एक 'कृषक संघ' का गठन किया। इस संगठन का मुख्य कार्य पैसे एकत्र करना एवं सभायें आयोजित करना होता था।

दक्कन विद्रोह

महाराष्ट्र के पूना एवं अहमदनगर ज़िलों में गुजराती एवं मारवाड़ी साहूकार ढेर सारे हथकण्डे अपनाकर किसानों का शोषण कर रहे थे। दिसम्बर 1874 ई. में एक सूदखोर कालूराम ने किसान (बाबा साहिब देशमुख) के ख़िलाफ़ अदालत से घर की नीलामी की डिक्री प्राप्त कर ली। इस पर किसानों ने साहूकारों के विरुद्ध आन्दोलन शुरू कर दिया। इन साहूकारों के विरुद्ध आन्दोलन की शुरुआत 1874 ई. में शिरूर तालुका के करडाह गाँव से हुई।

उत्तर प्रदेश में किसान आन्दोलन

होमरूल लीग के कार्यकताओं के प्रयास तथा गौरीशंकर मिश्र, इन्द्र नारायण द्विवेदी तथा मदन मोहन मालवीय के दिशा निर्देशन के परिणामस्वरूप फ़रवरी, 1918 ई. में उत्तर प्रदेश में 'किसान सभा' का गठन किया गया। 1919 ई. के अन्तिम दिनों में किसानों का संगठित विद्रोह खुलकर सामने आया। प्रतापगढ़ ज़िले की एक जागीर में 'नाई धोबी बंद' सामाजिक बहिष्कार संगठित कारवाई की पहली घटना थी। अवध की तालुकेदारी में ग्राम पंचायतों के नेतृत्व में किसान बैठकों का सिलसिला शुरू हो गया। झिंगुरीपाल सिंह एवं दुर्गपाल सिंह ने इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।[3,4] लेकिन जल्द ही एक चेहरे के रूप में बाबा रामचन्द्र उभर कर सामने आए। उत्तर प्रदेश के किसान आन्दोलन को 1920 ई. के दशक में सर्वाधिक मज़बूती बाबा रामचन्द्र ने प्रदान की। उनके व्यक्तिगत प्रयासों से ही 17 अक्टूबर, 1920 ई. को प्रतापगढ़ ज़िले में 'अवध किसान सभा' का गठन किया गया। प्रतापगढ़ ज़िले का 'खरगाँव' किसान सभा की गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र था। इस संगठन को जवाहरलाल नेहरू, गौरीशंकर मिश्र, माता बदल पांडे, केदारनाथ आदि ने अपने सहयोग से शक्ति प्रदान की। उत्तर प्रदेश के हरदोई, बहराइच एवं सीतापुर ज़िलों में लगान में वृद्धि एवं उपज के रूप में लगान

वसूली को लेकर अवध के किसानों ने 'एका आन्दोलन' नाम का आन्दोलन चलाया। इस आन्दोलन में कुछ ज़मींदार भी शामिल थे। इस आन्दोलन के प्रमुख नेता 'मदारी पासी' और 'सहदेव' थे। ये दोनों निम्न जाति के किसान थे।

मोपला विद्रोह (1920 ई.)

केरल के मालाबार क्षेत्र में मोपलाओं द्वारा 1920 ई. में विद्राह किया गया। प्रारम्भ में यह विद्रोह अंग्रेज़ हुकूमत के ख़िलाफ़ था। महात्मा गाँधी, शौकत अली, मौलाना अबुल कलाम आज़ाद जैसे नेताओं का सहयोग इस आन्दोलन को प्राप्त था। इस आन्दोलन के मुख्य नेता के रूप में 'अली मुसलियार' चर्चित थे। 15 फ़रवरी, 1921 ई. को सरकार ने निषेधाज्ञा लागू कर ख़िलाफ़त तथा कांग्रेस के नेता याकूब हसन, यू. गोपाल मेनन, पी. मोइद्दीन कोया और के. माधवन नायर को गिरफ्तार कर लिया। इसके बाद यह आन्दोलन स्थानीय मोपला नेताओं के हाथ में चला गया। 1920 ई. में इस आन्दोलन ने हिन्दू-मुसलमानों के मध्य साम्प्रदायिक आन्दोलन का रूप ले लिया, परन्तु शीघ्र ही इस आन्दोलन को कुचल दिया गया।[5,6]

कूका विद्रोह

कृषि सम्बन्धी समस्याओं के ख़िलाफ़ अंग्रेज़ सरकार से लड़ने के लिए बनाये गये इस संगठन के संस्थापक भगत जवाहरमल थे। 1872 ई. में इनके शिष्य बाबा राम सिंह ने अंग्रेज़ों का कड़ाई से सामना किया। कालान्तर में उन्हें कैद कर रंगून (अब यांगून) भेज दिया गया, जहाँ पर 1885 ई. में उनकी मृत्यु हो गई।

रामोसी किसानों का विद्रोह

महाराष्ट्र में वासुदेव बलवंत फड़के के नेतृत्व में रमोसी किसानों ने ज़मींदारों के अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह किया।

रंपाओं का विद्रोह

आन्ध्र प्रदेश में सीताराम राजू के नेतृत्व में औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध यह विद्रोह हुआ, जो 1879 ई. से लेकर 1920-22 ई. तक छिटपुट ढंग से चलता रहा। रंपाओं को 'मुट्टा' तथा उनके ज़मींदार को 'मुट्टादार' कहते थे। सुलिवन ने रंपाओं के विद्रोह के कारणों की जाँच की। उसने नये ज़मीदारों को हटाकर पुराने ज़मींदारों को रखने की सिफारिश की थी।[7,8]

ताना भगत आन्दोलन

इस आन्दोलन की शुरुआत 1914 ई. में बिहार में हुई। यह आन्दोलन लगान की ऊची दर तथा चौकीदारी कर के विरुद्ध किया गया था। इस आन्दोलन के प्रवर्तक 'जतरा भगत' थे, जिसे कभी 'विरसा', कभी 'जमी' तो कभी 'केसर बाबा' के समतुल्य होने की बात कही गयी है। इसके अतिरिक्त अन्य नेताओं में बलराम भगत, गुरुरक्षितणी भगत आदि इस आन्दोलन से सम्बद्ध थे। 'मुण्डा आन्दोलन' की समाप्ति के क़रीब 13 वर्ष बाद 'ताना भगत आन्दोलन' शुरू हुआ। यह ऐसा धार्मिक आन्दोलन था, जिसके राजनीतिक लक्ष्य थे। यह आदिवासी जनता को संगठित करने के लिए नये 'पंथ' के निर्माण का आन्दोलन था। इस मायने में यह बिरसा मुण्डा आन्दोलन का ही विस्तार था। मुक्ति-संघर्ष के क्रम में बिरसा मुण्डा ने जनजातीय पंथ की स्थापना के लिए सामुदायिकता के आदर्श और मानदंड निर्धारित किये थे।

तेभागा आन्दोलन

किसान आन्दोलनों में 1946 ई. का बंगाल का तेभागा आन्दोलन सर्वाधिक सशक्त आन्दोलन था, जिसमें किसानों ने 'फ्लाइड कमीशन' की सिफ़ारिश के अनुरूप लगान की दर घटाकर एक तिहाई करने के लिए संघर्ष शुरू किया था। यह आन्दोलन जोतदारों के विरुद्ध बंटाईदारों का आन्दोलन था। इस आन्दोलन के महत्त्वपूर्ण नेता 'कम्पाराम सिंह' एवं 'भवन सिंह' थे। बंगाल का 'तेभागा आंदोलन' फ़सल का दो-तिहाई हिस्सा उत्पीड़ित बटाईदार किसानों को दिलाने का आंदोलन था। यह बंगाल के 28 में से 15 ज़िलों में फैला, विशेषकर उत्तरी और तटवर्ती सुन्दरबन क्षेत्रों में। 'किसान सभा' के आह्वान पर लड़े गए इस आंदोलन में लगभग 50 लाख किसानों ने भाग लिया और इसे खेतिहर मज़दूरों का भी व्यापक समर्थन प्राप्त हुआ।[9,10]

तेलंगाना आन्दोलन

आंध्र प्रदेश में यह आन्दोलन ज़मींदारों एवं साहूकारों के शोषण की नीति के ख़िलाफ़ तथा भ्रष्ट अधिकारियों के अत्याचार के विरुद्ध 1946 ई. में किया गया था। 1858 ई. के बाद हुए किसान आन्दोलनों का चरित्र पूर्व के आन्दोलन से अलग था। अब किसान बगैर किसी मध्यस्थ के स्वयं ही अपनी लड़ाई लड़ने लगे। इनकी अधिकांश माँगे आर्थिक होती थीं। किसान आन्दोलन ने राजनीतिक शक्ति के अभाव में ब्रिटिश उपनिवेश का विरोध नहीं किया। किसानों की लड़ाई के पीछे उद्देश्य व्यवस्था-परिवर्तन नहीं था, बल्कि वे यथास्थिति बनाए रखना चाहते थे। इन आन्दोलनों की असफलता के पीछे किसी ठोस विचारधारा, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक कार्यक्रमों का अभाव था।

बिजोलिया किसान आन्दोलन

यह 'किसान आन्दोलन' भारत भर में प्रसिद्ध रहा, जो मशहूर क्रांतिकारी विजय सिंह पथिक के नेतृत्व में चला था। बिजोलिया किसान आन्दोलन सन 1847 से प्रारम्भ होकर क़रीब अर्द्ध शताब्दी तक चलता रहा। जिस प्रकार इस आन्दोलन में किसानों ने त्याग और बलिदान की भावना प्रस्तुत की, इसके उदाहरण अपवादस्वरूप ही प्राप्त हैं। किसानों ने जिस प्रकार निरंकुश नौकरशाही एवं स्वेच्छाचारी सामंतों का संगठित होकर मुक़ाबला किया, वह इतिहास बन गया।

विचार-विमर्श

1923 ई. में स्वामी सहजानंद सरस्वती ने 'बिहार किसान सभा' का गठन किया। 1928 ई. में 'आंध्र प्रान्तीय रैय्यत सभा' की स्थापना एन.जी. रंगा ने की। उड़ीसा में मालती चैधरी ने 'उत्तकल प्रान्तीय किसान सभा' की स्थापना की। बंगाल में 'टेंनेंसी एक्ट' को लेकर अकरम ख़ाँ, अब्दुर्रहीम, फ़जलुलहक, के प्रयासों से 1929 ई. में 'कृषक प्रजा पार्टी' की स्थापना हुई। अप्रैल, 1935 ई. में संयुक्त प्रान्त में किसान संघ की स्थापना हुई। इसी वर्ष एन.जी. रंगा एवं अन्य किसान नेताओं ने सभी प्रान्तीय किसान सभाओं को मिलाकर एक 'अखिल भारतीय किसान संगठन' बनाने की योजना बनाई।[11,12]

चम्पारन सत्याग्रह

चम्पारन का मामला बहुत पुराना था। चम्पारन के किसानों से अंग्रेज़ बाग़ान मालिकों ने एक अनुबंध करा लिया था, जिसके अंतर्गत किसानों को ज़मीन के 3/20वें हिस्से पर नील की खेती करना अनिवार्य था। इसे 'तिनकठिया पद्धति' कहते थे। 19वीं शताब्दी के अन्त में रासायनिक रगों की खोज और उनके प्रचलन से नील के बाज़ार में गिरावट आने लगी, जिससे नील बाग़ान के मालिक अपने कारखाने बंद करने लगे। किसान भी नील की खेती से छुटकारा पाना चाहते थे।

खेड़ा सत्याग्रह

चम्पारन के बाद गाँधीजी ने 1918 ई. में खेड़ा किसानों की समस्याओं को लेकर आन्दोलन शुरू किया। खेड़ा गुजरात में स्थित है। खेड़ा में गाँधीजी ने अपने प्रथम वास्तविक 'किसान सत्याग्रह' की शुरुआत की। खेड़ा के कुनबी-पाटीदार किसानों ने सरकार से लगान में राहत की माँग की, लेकिन कोई रियासत नहीं मिली। गाँधीजी ने 22 मार्च, 1918 ई. में खेड़ा आन्दोलन की बागडोर सम्भाली। अन्य सहयोगियों में सरदार वल्लभ भाई पटेल और इन्दुलाल याज्ञनिक थे। 22 मार्च, 1918 ई. को नाडियाड में एक आम सभा में गाँधीजी ने किसानों का लगान अदा न करने का सुझाव दिया। लगान न अदा करने का पहला नारा खेड़ा के 'कापड़गंज' तालुका में स्थानीय नेता 'मोहन पाण्ड्या' ने दिया। गाँधीजी के सत्याग्रह के आगे विवश होकर सरकार ने यह आदेश दिया कि, वसूली समर्थ किसानों से ही की जाय।

बारदोली सत्याग्रह (1920 ई.)

सूरत (गुजरात) के बारदोली तालुके में 1928 ई. में किसानों द्वारा 'लगान' न अदायगी का आन्दोलन चलाया गया। इस आन्दोलन में केवल 'कुनबी-पाटीदार' जातियों के भू-स्वामी किसानों ने ही नहीं, बल्कि 'कालिपराज' (काले लोग) जनजाति के लोगों ने भी हिस्सा लिया। बारदोली सत्याग्रह पूरे राष्ट्रीय आन्दोलन का सबसे संगठित, व्यापक एवं सफल आन्दोलन रहा है। बारदोली के 'मेड़ता बन्धुओं' (कल्याण जी और कुंवर जी) तथा दयाल जी ने किसानों के समर्थन में 1922 ई. से आन्दोलन चलाया था। बाद में इसका नेतृत्व सरदार वल्लभ भाई पटेल ने किया। बारदोली क्षेत्र में कालिपराज जनजाति रहती थी, जिसे 'हाली पद्धति' के अन्तर्गत उच्च जातियों के यहाँ पुश्तैनी मज़दूर के रूप में कार्य करना होता था।

तेलंगाना का किसान आन्दोलन (1946-1951 ई.)

हैदराबाद रियासत में तेलंगाना में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यह आन्दोलन शुरू हुआ। यहाँ पर किसानों से कम दाम पर अनाज की ज़बरन वसूली की जा रही थी, जिसके कारण उनके अन्दर एक आक्रोश उत्पन्न हुआ। इस आन्दोलन का तात्कालिक कारण 'कम्युनिस्ट नेता' कमरैया की पुलिस द्वारा हत्या कर देना था। किसानों ने पुलिस व ज़मींदारों पर हमला कर दिया तथा हैदराबाद रियासत को समाप्त कर भारत का अंग बनाने माँग की। तेलंगाना कृषक आन्दोलन भारतीय इतिहास के सबसे लम्बे छापामार कृषक युद्ध का साक्षी बना।

अखिल भारतीय किसान सभा भारत के किसानों का एक संगठन है जिसकी स्थापना ११ अप्रैल १९३६ में स्वामी सहजानन्द सरस्वती ने की थी तथा एन.जी.रंगा इसके सचिव चुने गए। यह अविभाजित भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का एक अनुषांगिक संगठन था। बाद में इसका विभाजन हो गया। सम्प्रति एक ही नाम से दो संगठन हैं: अखिल भारतीय किसान सभा (अजय भवन) और अखिल भारतीय किसान सभा (अशोक रोड)। किसान सभा आंदोलन, बिहार में स्वामी सहजानंद सरस्वती के नेतृत्व में शुरू हुआ। इससे पहले सन् 1929 ई. में स्वामी सहजानन्द ने बिहार प्रांतीय किसान सभा (बीपीकेएस) की स्थापना की थी जो किसानों पर ज़मीनदारों द्वारा होने वाले हमलों के खिलाफ किसानों की शिकायतों को इकट्ठा करने के लिए गठित किया था।[13,14] इसके गठन के फलस्वरूप भारत में किसानों की गतिविधियाँ आरम्भ हुईं। [1][2]

धीरे-धीरे किसान आन्दोलन भारत के बाकी हिस्सों में तेजी से फैल गया। 1934 में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी (सीएसपी) के गठन ने कम्युनिस्टों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के साथ मिलकर काम करने में मदद की, हालांकि अस्थायी रूप से, [3] फिर अप्रैल 1935 में, किसान नेताओं एनजी रंगा और तत्कालीन सचिव और संयुक्त सचिव के क्रमशः ईएमएस नंबूदिरिपद दक्षिण भारतीय फेडरेशन ऑफ किसानों और कृषि श्रम ने अखिल भारतीय किसान निकाय के गठन का सुझाव दिया। [4] ११ अप्रैल १९३६ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लखनऊ सत्र में अखिल भारतीय किसान सभा के गठन के साथ ये सभी किसान संगठन इसमें समाहित हो गये। सहजानन्द सरस्वती इसके प्रथम अध्यक्ष निर्वाचित हुए।[5] इसमें रंगा, नंबूदिरीपद, करीनंद शर्मा, यमुना करजी, यदुन्दन (जदुनंदन) शर्मा, राहुल सांकृत्यायन, पी। सुंदरय्या, राम मनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण, आचार्य नरेंद्र देव और बंकिम मुखर्जी जैसे लोग शामिल थे। अगस्त 1936 में जारी किसान मैनिफेस्टो ने ज़मीनदार प्रणाली को खत्म करने और ग्रामीण ऋणों को रद्द करने की मांग की। अक्टूबर 1937 में किसान सभा ने लाल झंडा को अपने ध्वज के रूप में अपनाया। जल्द ही, इसके नेता कांग्रेस के साथ तेजी से दूर होते गए, और बार-बार बिहार और संयुक्त प्रांत में कांग्रेस सरकारों के साथ टकराव में आए। [4][6]

बाद के वर्षों में, कांग्रेस से दूर चले जाने के कारण, इस आंदोलन में समाजवादियों और कम्युनिस्टों का तेजी से प्रभुत्व बढ़ा। [2] 1938 तक कांग्रेस के हरिपुरा सत्र में, जिसकी अध्यक्षता नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने की थी, कांग्रेस से इसकी दूरी और बढ़ गयी। [4] मई 1942 तक यह भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के हाथ में आ गया जिसे अंततः जुलाई 1942 में सरकार ने वैध घोषित कर दिया था। [7] इसके बाद बंगाल समेत सम्पूर्ण भारत में इसकी सदस्यता काफी बढ़ी।

किसान सभा, कम्युनिस्ट पार्टी की 'जन युद्ध' (पीपुल्स वॉर) के विचार पर चला और अगस्त १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन से दूर रहा। हालांकि इसके कारण इसकी लोकप्रियता में कमी आयी। इसके कई सदस्यों ने पार्टी के आदेशों का उल्लंघन किया और आंदोलन में शामिल हो गए, और रंगा, इन्दूलाला याज्ञिक और सहजानन्द सरस्वती जैसे प्रमुख सदस्यों ने जल्द ही संगठन छोड़ दिया। [8]

सन्1964 भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी दो भागों में विभाजित हो गयी। इसके बाद, अखिल भारतीय किसान सभा भी दो भागों में विभाजित हो गया।

परिणाम

असम के लोगों ने भी अंग्रेजों के शोषण, भेदभाव और अत्याचार के खिलाफ स्वतंत्रता आंदोलन में बहादुरी से भाग लिया था. ऐसी ही एक घटना अंग्रेजों द्वारा भूमि कर की बढ़ती दर के खिलाफ असम के दारंग जिले के पथारूघाट में किसानों के ऐतिहासिक विद्रोह की है. आइये इस लेख के माध्यम से पथारूघाट किसान विद्रोह के बारे में अध्ययन करते हैं. स्वतंत्र भारत के इतिहास के पन्नों में ऐसी कई घटनाएं हैं जो बहादुरी, बलिदान और देशभक्ति की कहानियों को उजागर करती हैं. ब्रिटिश आधिपत्य के विरुद्ध भारत के स्वतंत्रता संग्राम में, भारत के विभिन्न हिस्सों से अनगिनत लोगों ने अपनी मातृभूमि को ब्रिटिश राज से आज़ाद करने के लिए अपने प्राणों की बली दी.

असम के लोगों ने भी अंग्रेजों के शोषण, भेदभाव और अत्याचार के खिलाफ स्वतंत्रता आंदोलन में बहादुरी से भाग लिया था. ऐसी ही एक घटना अंग्रेजों द्वारा भूमि कर की बढ़ती दर के खिलाफ असम के दारंग जिले (Darrang district) के पथारूघाट में किसानों के ऐतिहासिक विद्रोह की है. आपको बता दें कि पथारूघाट, असम के दारंग जिले का एक छोटा सा गाँव, गुवाहाटी से लगभग 60 किमी

उत्तर-पूर्व में स्थित है.जलियांवाला बाग़ हत्याकांड से 25 साल पहले 28 जनवरी, 1894 में 100 से ज़्यादा किसान अंग्रेज़ों की गोली का शिकार होकर मारे गए थे. यह घटना आसाम के पथारूघाट या पथारीघाट में हुई थी. इस दिन किसान अंग्रेज़ों के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे थे. अंग्रेजों ने सैनिकों ने इन किसानों पर गोली चलाने का हुक्म दिया जिसकी वजह से कई किसानों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था.

इंडियन एक्सप्रेस के अनुसार 1826 में ब्रिटिश द्वारा असम पर कब्जे के बाद, इस राज्य की वृहद भूमि का सर्वेक्षण शुरू हुआ. इस तरह के सर्वेक्षणों के आधार पर, अंग्रेजों ने भूमि कर लगाना शुरू कर दिया था जिस कारण से किसानों में असंतोष फैला. 1893 में, ब्रिटिश सरकार ने कृषीय भूमिकर को 70- 80 प्रतिशत तक बढ़ाने का निर्णय लिया था.[15]

गुवाहाटी स्थित लेखक अरूप कुमार दत्ता (Arup Kumar Dutta) के अनुसार, जिन्होंने इस घटना पर आधारित एक पुस्तक पोथोरूघाट (Pothorughat) लिखी है, इन सभाओं के लोकतांत्रिक होने के बावजूद, अंग्रेजों ने उन्हें "देशद्रोह का प्रजनन मैदान" माना. "इसलिए जब भी कोई राएज़ मेल (Raij Mel) होता था, तो अंग्रेज़ उसको खदेड़ने के लिए भारी हाथ से या तैयारी के साथ आते थे," उन्होंने कहा.

एक अन्य प्रोफेसर कमलाकांता डेका के अनुसार 28 जनवरी, 1894 को ऐसा ही हुआ था. "जब ब्रिटिश अधिकारी किसानों की शिकायतों को सुनने से इनकार कर रहे थे, तब वहां माहोल गर्म हो गया था". "फिर लाठीचार्ज हुआ, उसके बाद किसानों पर गोलीबारी हुई जिसमें मौजूद कई किसानों की मौत हो गई थी." औपनिवेशिक प्रशासन द्वारा लगाए गए भू-राजस्व में वृद्धि के विरोध में किसान बड़ी संख्या में बाहर आ गए थे. इसी जगह पर एक शहीद स्मारक भी बनाया गया है.

प्रोफेसर डेका के अनुसार, बड़े असमिया समुदाय के लिए, पथारूघाट,सराईघाट की लड़ाई (Battle of Saraighat) में दूसरे स्थान पर आता है, जब अहोमों ने 1671 में मुगलों को हराया था."यह असम के समुदाय के लिए बेहद प्रेरणादायक है." कई लेखकों के अनुसार "पथारूघाट किसान विद्रोह" एक शांतिपूर्ण विरोध और सविनय अवज्ञा आंदोलन का अग्रदूत था, जिसे बाद में महात्मा गांधी द्वारा प्रचारित किया गया था".

अरूप कुमार दत्ता अपनी पुस्तक की शुरुआत में, लिखते हैं कि यह "पूर्व-कांग्रेस के इतिहास में कुछ मौकों में से एक, अखिल भारतीय साम्राज्यवाद-विरोधी आंदोलन था, जब एक अच्छी तरह से परिभाषित नेतृत्व की अनुपस्थिति में, जनता ने खुद को संगठित किया अंग्रेजों के निरंकुश नेतृत्व का विरोध किया".

इस घटना ने भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को एक नई दिशा दी थी. कई निर्दोष किसानों की मौतों ने ब्रिटिशों के खिलाफ स्वतंत्रता संग्राम को और मजबूत किया. पथारूघाट के शहीदों को हमेशा उनकी बहादुरी और उनकी मातृभूमि के लिए बलिदान के लिए इतिहास के सुनहरे पन्नों में याद किया जाता है. 28 जनवरी, 2001 को सेना द्वारा एक शहीद स्तंभ स्थल बनाया गया था और असम के पूर्व राज्यपाल एस.के सिन्हा (SK Sinha) द्वारा इसका अनावरण किया गया था.

हर साल 28 जनवरी को, सरकार और स्थानीय लोग कृषक स्वाहिद दिवस मनाते हैं .

कृषक स्वाहिद दिवस में भाग लेते हुए, सी.एम सोनोवाल ने औपनिवेशिक शासकों के खिलाफ लड़ाई में किसानों के बलिदान और वीरता को याद किया.

निष्कर्ष

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम : आजादी की लड़ाई में अंग्रजों के दांत खट्टे करने में जिले के चांदन प्रखंड में कई स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान है। यहां महात्मा गांधी से लेकर विनोबा भावे तक आकर रुके थे। आजादी के दीवानों और अग्रेजों की क्रूरता की कहानी बिरनिया पंचायत की नीलकोठी बयान कर रही है।किसानों को नील की खेती करने पर मजबूर किया जाता था। महात्मा गांधी और विनोबा भावे द्वारा प्रेरित करने पर किसानों ने नील की खेती करने से मना कर दिया। कई किसानों पर इसके बाद काफी जुल्म किया गया।[14,15] अंग्रेज अपनी दुकान से किसानों को नील खरीदने पर मजबूर करते थे। उपज होने पर कम कीमत देकर नील खरीदकर इंग्लैंड भेजा जाता था। बाद में महात्मा गांधी और विनोबा भावे द्वारा प्रेरित करने पर किसानों ने नील की खेती करने से मना कर दिया। इस कारण कई किसानों पर जुल्म भी ढाए गए। इससे बचने के लिए किसानों ने एक जुगत निकाली। वृद्ध लालमोहन पांडेय, भागवत पांडेय, जयराम सोरेन और बासुदेव राय बताते हैं कि नील से निजात पाने के लिए किसान अंग्रेजों से मिले नील के बीजों को उबालकर बोते थे।नील की पैदावार ठप हो गई। तब अग्रेजों ने इनसे नील की खेती करानी बंद कर दी। इन सेनानियों में सबसे आगे रहने वाले काशीनाथ मालवीय को अंग्रेजों द्वारा मौत की सजा सुनाई गई थी, लेकिन वे जेल से भाग निकले थे। देश की स्वतंत्रता के बाद उन्हें क्षमा कर दिया गया। काशीनाथ मालवीय के अलावा ईश्वरचंद्र दुबे, विष्णुलाल मोदी, ब्रजकिशोर प्रसाद, हरिकिशोर प्रसाद, मथुरानाथ पांडेय, सुखु मांझी, शंकर पांडेय, देवी पांडेय, नरङ्कसह राय, श्यामला राय सहित अन्य सेनानियों का स्मारक बांका में है। यहां 15 अगस्त और 26 जनवरी को गांधी चौक पर स्थित स्मारक पर फूल चढ़ा कर बलिदानियों को याद किया जाता है।

प्रतिक्रिया दें संदर्भ

1) भारतीय कृषि से जुड़े महत्वपूर्ण तथ्य और जानकारी
2) भारत का कृषि विज्ञान और कृषि दर्शन
3) भारतीय कृषि: चुनौती की ओर
4) भारतीय कृषि को पुनर्भाषित करने की जरुरत—सुनील अमर
5) Indian Agriculture. U.S. Library of Congress.
6) Indian Council for Agricultural Research Home Page
7) Website of The Indian Farmers Association
8) कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण
9) Commodity Research, Food and Agribusiness, Commodity News and Analysis (in English) (based in India)
10) Agropedia - One Stop Shop For All Kinds Of Information On Agriculture In India
11) Agriculture Commodity Market News - Agri Commodity News, Rates, Daily Trading Prices, The Trade News Agency NNS - Daily commodity prices of Agricultural and Agri based Commodities from different Markets of India. Indian Agriculture Industry business to business (b2b) News and Directory (in English) (based in India)
12) अच्छी बारिश ने बढ़ाई बंपर फसल की उम्मीद (2017)
13) भारतीय कृषि व्यवस्था : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य एवं भविष्य की योजना
14) ↑ "कृषि क्षेत्र: विशेषताएं". पत्र सूचना कार्यालय, भारत सरकार. 9 जुलाई 2014. मूल से 14 जुलाई 2014 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 9 जुलाई 2014.
15) ↑ कृषि निर्यात में भारत ने बनाया नया रिकॉर्ड (अप्रैल 2015)